

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 30: प्रचेताओं का वरदान

21 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



समुद्र में दस हज़ार वर्ष की तपस्या के पश्चात्, शाश्वत परम भगवान् प्रचेताओं के समक्ष अपने मनोहर रूप में प्रकट होते हैं, अपनी शान्त प्रभा से उनकी लम्बी तपस्या के प्रत्येक चिह्न को विलीन करते हुए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

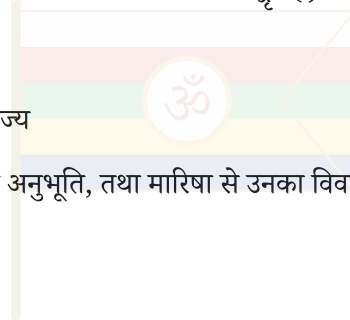
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्जम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पूर्व अध्यायों में, दस प्रचेताओं ने भगवान् शिव से एक पवित्र स्तोत्र पाया और समुद्र में एक लम्बी तपस्या को स्वयं को सौंप दिया, जबकि उनके पिता, राजा प्राचीनबर्हि, नारद की पुरञ्जन-कथा से जगाए गए। यह त्रिंश अध्याय प्रचेताओं तथा उनके प्रतिफल की ओर लौटता है। विदुर मैत्रेय से पूछते हैं

कि उनकी लम्बी तपस्या तथा भक्ति का क्या फल हुआ; और मैत्रेय बताते हैं कि कैसे, दस हजार वर्ष के पश्चात्, स्वयं परम भगवान् उनके समक्ष प्रकट हुए और उन्हें एक वरदान दिया। उनकी कृपा से भरकर, प्रचेता घोषित करते हैं कि भगवान् के भक्तों का एक क्षण का संग समस्त स्वर्ग या मुक्ति से बढ़कर है, और उन्हें अपने अन्तिम स्वतन्त्रता से पहले कुछ समय के लिए सांसारिक कर्तव्य निभाने का कोमल निर्देश दिया जाता है। घर लौटते हुए, वे पृथ्वी को वृक्षों से भरी पाते हैं, और, क्रुद्ध होकर, उन्हें जलाने को उद्यत होते हैं — जब तक कि भगवान् ब्रह्मा उन्हें सुज्ञान भरे वचनों से शान्त न करें और वृक्ष उन्हें एक सुन्दर कन्या, मारिषा, अपनी पालित-पुत्री, जिसे चन्द्रदेव सोम ने बाल्यकाल में पोषित किया था, अर्पित न करें, जिससे प्रचेता विवाह करते तथा अपनी रानी के रूप में लेते हैं। यह भक्ति के प्रतिफल का, पवित्र संग के सर्वोच्च मूल्य का, और क्रोध से भी शान्ति लाने वाली कृपा का अध्याय है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 30 (त्रिंश अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: प्रचेताओं को भगवान् का वरदान तथा उनका विवाह
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपना उपदेश पुनः आरम्भ करते हुए (जिसमें प्रचेताओं के वचन उद्धृत हैं)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: प्रचेताओं की तपस्या का समुद्र, तथा उनके लौटने पर उनका राज्य
- केन्द्रीय विषय: भगवान् का प्रचेताओं के समक्ष प्राकट्य तथा वरदान, उनकी अनुभूति, तथा मारिषा से उनका विवाह
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 30, श्लोक 1-51
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पूर्व अध्यायों का सन्दर्भ

अध्याय 24 ने बताया कि कैसे भगवान् शिव ने प्रचेताओं को अपना स्तोत्र सिखाया; अध्याय 25 ने उन्हें समुद्र में अपनी लम्बी तपस्या आरम्भ करते दिखाया; और अध्याय 26-29 ने नारद की कथा से उनके पिता के जागरण का अनुगमन किया। यह त्रिंश अध्याय अब प्रचेताओं की ओर लौटता है, जैसे विदुर मैत्रेय से पूछते हैं कि उनकी भक्ति ने क्या प्रतिफल अर्जित किया।

लम्बी तपस्या का प्रतिफल

समुद्र की गहराइयों में, अपने पिता की आज्ञा का पालन करते हुए, प्रचेताओं ने परम भगवान् — अन्तर्यामी पुरुष — को उनके स्तोत्र के जप, पूजा, तथा कठोर तपस्या से सन्तुष्ट किया।

मैत्रेय उवाच

प्रचेतसोऽन्तरुदधौ पितुरादेशकारिणः ।

जपयज्ञेन तपसा पुरञ्जनमतोषयन् ॥ ३ ॥

maitreya uvāca pracetaso 'ntar udadhau pitur ādeśa-kāriṇaḥ japa-yajñena tapasā purañjanam atoṣayan

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: प्रचेताओं ने, समुद्र में, अपने पिता की आज्ञा का पालन करते हुए, परम भगवान् — अन्तर्यामी पुरुष — को जप, पूजा, तथा तपस्या से सन्तुष्ट किया। (स्कन्ध 4, अध्याय 30, श्लोक 3)



समुद्र की गहराइयों में, दस प्रचेता एक लम्बी तथा कठोर तपस्या को स्वयं को सौंप देते हैं, भगवान् शिव द्वारा सिखाए स्तोत्र को जपते हुए परम भगवान् को सन्तुष्ट करने (श्लोक 1-3)।

भगवान् प्रकट होते हैं

उनकी तपस्या के दस हजार वर्ष के अन्त में, शाश्वत परम पुरुष उनके समक्ष अपने अत्यन्त मनोहर रूप में प्रकट हुए, और उनकी उपस्थिति की शान्त प्रभा ने उनकी समस्त लम्बी तपस्या के श्रम को शान्त तथा पुरस्कृत किया।

दशवर्षसहस्रान्ते पुरुषस्तु सनातनः ।

तेषामाविरभूत्कृच्छ्रं शान्तेन शमयन् रुचा ॥ ४ ॥

daśa-varṣa-sahasrānte puruṣas tu sanātanaḥ teṣām āvirabhūt kṛcchraṁ śāntena śamayan rucā

अर्थ: दस हजार वर्ष की तपस्या के अन्त में, शाश्वत परम पुरुष उनके समक्ष प्रकट हुए, अपनी शान्त प्रभा से उनकी तपस्या के श्रम को शान्त करते हुए। (स्कन्ध 4, अध्याय 30, श्लोक 4)

वे गरुड़ पर आरूढ़ होकर आए, उनका रूप मेरु के शिखर पर टिके मेघ जैसा, पीताम्बर धारण किए, कण्ठ में कौस्तुभ मणि तथा घुटनों तक झूलती वनमाला के साथ; उनकी आठ भुजाओं में उनके शस्त्र थे, तथा चमकते किरीट से मण्डित उनका मुख ऐसी प्रभा से दीप्त था जो सृष्टि की समस्त छाया को विलीन कर दे (श्लोक 5-7)। करुणा भरी दृष्टि तथा मेघ-गर्जन सी वाणी से, उन्होंने दस भ्राताओं से कहा कि वे इस बात से कितने प्रसन्न हैं कि, पृथक् आत्मा होते हुए भी, वे अपनी भक्ति तथा परस्पर प्रेम में एक समान चलते हैं — और, यद्यपि उन्होंने कुछ भी नहीं माँगा था, उन्होंने उन्हें एक वरदान माँगने को कहा (श्लोक 8-9)। फिर, उनके मुख से याचना का एक भी शब्द निकलने से पहले, उन्होंने स्वयं वह प्रदान कर दिया: पूरे दस लाख दिव्य वर्षों तक वे बिना किसी रुकावट के तथा अक्षुण्ण बल के साथ, इस लोक तथा उच्चतर लोकों की समस्त सुविधाओं का भोग करेंगे; तत्पश्चात् ही उनकी भक्ति उनके प्रति शुद्ध होकर पकेगी तथा उन्हें समस्त आसक्ति से मुक्त करेगी, जिससे उस विशाल अवधि के अन्त में वे उनके अपने धाम को लौट सकें (श्लोक 17-18)। इस बीच संसार में वे जो भी करें, यदि उन्हें अर्पित किया जाए, तो वह उन्हें उसके फल से अछूता छोड़ देगा, ऐसा उन्होंने बताया (श्लोक 19)। उसी साँस में उन्होंने एक कन्या की बात की — ऋषि कण्डु तथा स्वर्गिक प्रम्लोचा की पुत्री, जिसे शिशु रूप में वनवृक्षों की देखभाल में छोड़ दिया गया था — जिससे, उनके पिता की इच्छानुसार, उन्हें विवाह करना था तथा जिससे ऐसी सन्तान उत्पन्न करनी थी जो तीनों लोकों को भर दे (श्लोक 12-16)।

पवित्र संग का सर्वोच्च मूल्य

तभी, जो कुछ भगवान् ने बिना माँगे ही उन्हें पहले से दे दिया था, उससे अभिभूत होकर, प्रचेताओं ने अपनी विस्तृत अनुभूति-स्तुति आरम्भ की। यह पहले भगवान् को वासुदेव के रूप में नमन करती है — जो प्रत्येक हृदय तथा सृष्टि के प्रत्येक परमाणु में समान रूप से विद्यमान हैं, बिना किसी मित्र के प्रति पक्षपात या किसी शत्रु के प्रति द्वेष के (श्लोक 24, 42)। फिर, यद्यपि उन्हें बहुत पहले ही कोई भी वरदान माँगने के लिए आमन्त्रित किया जा चुका था, वे अपने लिए इस लोक या परलोक में कुछ भी नहीं माँगते: केवल यह कि जन्म-जन्म, जिस भी शरीर या लोक में वे रहें, उन्हें उन जनों का संग मिले जो उनकी लीलाओं की चर्चा करते हैं (श्लोक 33)। क्योंकि, जैसा स्वयं भगवान् ने अन्यत्र सिखाया है, वे वास्तव में न तो अपने वैकुण्ठ में निवास करते हैं और न ही योगी के ध्यान में, अपितु वहाँ जहाँ उनके भक्त उनकी महिमा का गान करने एकत्र होते हैं (श्लोक 35-36) — अतः उनके भक्तों का संग खोजना, वस्तुतः, स्वयं भगवान् को खोजना है।

उनकी कृपा से अभिभूत होकर, प्रचेताओं ने एक ऐसी अनुभूति व्यक्त की जो समस्त भागवत में सबसे प्रिय है। उन्होंने घोषित किया कि वे भगवान् के भक्तों के साथ बिताए एक अकेले पल को भी स्वर्ग की प्राप्ति या मुक्ति के समकक्ष कदापि नहीं मानेंगे — मरणधर्मा प्राणी जिन क्षणभंगुर वरदानों की कामना करते हैं, उनकी तो बिसात ही क्या।

तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।

भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥ ३४ ॥

tulayāma lavenāpi na svargaṁ nāpunar-bhavam bhagavat-saṅgi-saṅgasya martyānāṁ kim utāśiṣaḥ

अर्थ: हम भगवान् के भक्त के एक क्षण के संग को भी स्वर्ग या स्वयं मुक्ति के विरुद्ध नहीं तौलेंगे — फिर उन आशीर्वादों की तो बात ही क्या जिन्हें मरणधर्मा तरसते हैं। (स्कन्ध 4, अध्याय 30, श्लोक 34)



भगवान् की कृपा से भरकर, प्रचेता घोषित करते हैं कि उनके भक्तों का एक क्षण का संग समस्त स्वर्ग या मुक्ति से बढ़कर है — मरणधर्मा आत्माओं के लिए सर्वोच्च आशीर्वाद (श्लोक 30-43)।

जो कुछ भी वे माँग सकते थे, वह सब प्रदान करने के पश्चात्, भगवान् ने कुछ ऐसा किया जिसकी प्रचेताओं को आशा न थी: वे बस चले गए। मैत्रेय बताते हैं कि प्रचेता उनसे विलग होने को तैयार न थे, क्योंकि वे अभी तक उन्हें अपने हृदय की पूर्ण तृप्ति तक नहीं देख पाए थे — फिर भी भगवान् वैसे ही चले गए (श्लोक 43)। यह भी एक शिक्षा है। भगवान् चाहे कृपा के किसी क्षण में किसी भक्त के कितने भी निकट आ जाएँ, वे उस भक्त के द्वारा कभी अधिकृत या रोके नहीं जाते; उनका एक आलिंगन को छोड़ने के लिए सदैव तत्पर रहना स्वयं इस बात का प्रमाण है कि उसी क्षण उनकी कृपा सृष्टि भर में अनगिनत अन्य भक्तों पर, बिना माँगे, बरस रही है। प्रचेताओं की लालसा अस्वीकृत नहीं हुई — उसे बस यह स्मरण कराया गया कि भगवान् के प्रति प्रेम का मापदण्ड यह नहीं कि दर्शन कितने समय तक रहा, अपितु यह कि उस दर्शन ने हृदय को कितना पूर्णतः रूपान्तरित कर दिया।

लौटना तथा वृक्षों पर क्रोध

भगवान् द्वारा आशीर्वादित तथा निर्देशित, प्रचेता अन्ततः समुद्र के जल से बाहर निकले। किन्तु उनकी अनुपस्थिति के लम्बे युगों में, वृक्ष इतने ऊँचे तथा घने हो गए थे कि उन्होंने पृथ्वी का सम्पूर्ण मुख ढँक लिया, मानो स्वर्ग के मार्ग को ही रोक दें; और, यह देखकर, प्रचेता क्रुद्ध हुए।

अथ निर्याय सलिलात्प्रचेतस उदन्वतः ।

वीक्ष्याकुप्यन्द्रुमैश्छन्नां गां गां रोद्धुमिवोच्छ्रितैः ॥ ४४ ॥

atha niryāya salilāt pracetasa udanvataḥ vīkṣyākupyan drumaiś channāṁ gāṁ gāṁ roddhum ivocchritaiḥ

अर्थ: तब प्रचेता समुद्र के जल से बाहर निकले और, सम्पूर्ण पृथ्वी को इतने ऊँचे बड़े वृक्षों से ढँका देखकर मानो स्वर्ग का मार्ग रोक दें, वे क्रुद्ध हुए। (स्कन्ध 4, अध्याय 30, श्लोक 44)



अपनी लम्बी तपस्या के पश्चात् समुद्र से निकलकर, प्रचेता पृथ्वी को ऊँचे वृक्षों से भरी पाते हैं और, क्रुद्ध होकर, उन्हें नष्ट करने को उद्यत होते हैं — जब तक चन्द्रदेव सोम शान्ति करने न आएँ (श्लोक 44-47)।

अपने क्रोध में उन्होंने वनों को जलाने के लिए अग्नि तथा वायु प्रकट करना आरम्भ किया, ठीक जैसे प्रलय के समय भगवान् शिव करते हैं। वृक्षों को भस्म होते देख, स्वयं भगवान् ब्रह्मा उनके समक्ष आए और अपने सुज्ञान भरे वचनों से उनका क्रोध शान्त किया (श्लोक 46); उन्हीं के परामर्श पर, भयभीत शेष वृक्षों ने शान्ति के प्रतीक के रूप में एक सुन्दर कन्या को उनकी वधू बनने के लिए आगे किया (श्लोक 47)।

मारिषा, वृक्षों की पालित-पुत्री

यह कन्या मारिषा थी, वृक्षों की पालित-पुत्री। जब वह, एक शिशु के रूप में, वृक्षों की देखभाल में छोड़ी गई थी, और अपनी भूख में रोई, तब करुणामय सोम ने अपनी अमृत-वर्षा करने वाली अँगुली उसके मुख में डाल दी, जिससे उस शिशु का पालन-पोषण सम्भव हुआ।

क्षुत्क्षामाया मुखे राजा सोमः पीयूषवर्षिणीम् ।

देशिनीं रोदमानाया निदधे स दयान्वितः ॥ १४ ॥

kṣut-kṣāmāyā mukhe rājā somah pīyūṣa-varṣiṇīm deśinīm rodamānāyā nidadhe sa dayānvitaḥ

अर्थ: जब वह शिशु, वृक्षों की देखभाल में छोड़ी गई, अपनी भूख में रोई, तब चन्द्रदेव सोम ने, करुणा से, अपनी अमृत-बरसाती अँगुली उसके मुख में रखी, और इस प्रकार वह पोषित हुई। (स्कन्ध 4, अध्याय 30, श्लोक 14)



चन्द्रदेव सोम प्रचेताओं को सुन्दर मारिषा, वृक्षों की पालित-पुत्री जिसे उन्होंने पोषित किया था, अर्पित करते हैं, और, उनका क्रोध शान्त होकर, वे उससे विवाह करते तथा अपनी रानी के रूप में लेते हैं (श्लोक 48-50)।

भगवान् ब्रह्मा के परामर्श से अपना क्रोध शान्त होकर, प्रचेताओं ने वृक्षों द्वारा अर्पित कन्या को स्वीकार किया, उससे विवाह किया, और उसे अपनी रानी के रूप में घर ले गए, अपनी नगरी में पुनः बस गए।

उनके विवाह से एक अप्रत्याशित फल उत्पन्न हुआ। मारिषा की कोख से दक्ष का जन्म हुआ, जो सृष्ट प्राणियों के महान् प्रजापतियों में से एक बनने वाले थे — किन्तु मैत्रेय बताते हैं कि यह कोई साधारण जन्म न था। पूर्वजन्म में दक्ष ने भगवान् शिव का, जो स्वयं परम भगवान् के परम प्रिय भक्त हैं, अनादर किया था, और उस अपराध के कारण उन्हें प्रचेताओं के बीज से, पुनः एक स्त्री की कोख से जन्म लेना पड़ा: ब्रह्मा के अपने पुत्र भी किसी महान् वैष्णव को दिए जाने वाले सम्मान के नियम से मुक्त नहीं थे (श्लोक 48-49)। फिर भी कृपा ने उस दण्ड को कोमल किया। अपनी अक्षुण्ण तेजस्विता के साथ पुनर्जन्म लेकर, दक्ष को भगवान् ब्रह्मा ने प्राणियों की उत्पत्ति तथा रक्षा के पवित्र कार्य में नियुक्त किया, और समय आने पर उन्होंने अन्य महान् ऋषियों को भी सह-प्रजापतियों के रूप में नियुक्त किया, जिससे उनके द्वारा सृष्टि की जनसंख्या बढ़ी (श्लोक 50-51)।

इस प्रकार त्रिंश अध्याय भक्ति के पुरस्कृत होने तथा शान्ति के पुनर्स्थापित होने के साथ समाप्त होता है — दस भ्राता भगवान् द्वारा आशीर्वादित, अपनी वधू सहित स्थापित, समय आने पर दक्ष के पिता, और अगले अध्याय में अपनी कथा की निरन्तरता के लिए तैयार।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. सच्ची, निरन्तर भक्ति स्वयं भगवान् को खींच लाती है। प्रचेताओं की दस हज़ार वर्ष की तपस्या परम भगवान् के व्यक्तिगत प्राकट्य से मुकुटित होती है। जो उन्हें पूर्ण हृदय से अर्पित किया जाता है वह कभी व्यर्थ नहीं (श्लोक 4)।
2. भक्ति तथा सांसारिक कर्तव्य साथ चल सकते हैं। भगवान् प्रदान करते हैं कि प्रचेता कुछ समय अपने नियत कर्तव्य बिना अपनी भक्ति खोए निभाएँ, और अन्त में उन्हें प्राप्त करें। हमें अपने हृदय को भगवान् पर स्थिर रखने के लिए संसार में अपना स्थान त्यागने की आवश्यकता नहीं (श्लोक 17-19)।

3. भक्तों का संग सब उपहारों में सर्वोच्च है। प्रचेता भगवान् के भक्तों के एक क्षण को स्वर्ग या मुक्ति के बदले नहीं देंगे। पवित्र संग, जिसमें भगवान् स्मरण तथा प्रेम किए जाते हैं, किसी अन्य प्राप्ति से बढ़कर है (श्लोक 34)।

4. धर्मयुक्त क्रोध को भी सुज्ञान के आगे झुकना चाहिए। प्रचेता, वृक्षों की जंगली वृद्धि से उत्तेजित, उन्हें नष्ट करने को उद्यत हैं — जब तक भगवान् ब्रह्मा का शान्त तर्क उन्हें न मोड़ दे। सचमुच महान् अपने क्रोध को शमन होने देते हैं, ज्वाला के बीच भी (श्लोक 44-47)।

5. कृपा संघर्ष से भी उपहार लाती है। जो क्रोध में आरम्भ हुआ वह एक विवाह तथा आशीर्वाद में समाप्त होता है: उन्हीं वृक्षों से जिन्हें प्रचेता जलाते, उनकी रानी आती है, और उनके विवाह से दक्ष आते हैं, सृष्टि के महान् प्रजापतियों में से एक। भगवान् की कृपा हमारे संघर्षों से भी भला खींच सकती है (श्लोक 47-51)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के हृदय में एक ही श्लोक है जो भक्तों द्वारा युगों से प्रिय रहा है: कि प्रचेता भगवान् के भक्तों के साथ का एक पल भी स्वर्ग की प्राप्ति अथवा मुक्ति के तुल्य नहीं मानेंगे। यह मूल्यों का एक चौंकाने वाला मापदण्ड है। संसार का अधिकांश लाभ को धन, सुख, या दीर्घ आयु से नापता है; अधिक आध्यात्मिक-मन शायद ऊँचे, स्वर्ग या पुनर्जन्म से मुक्ति की ओर लक्ष्य करें। किन्तु प्रचेता, अभी-अभी भगवान् को साक्षात् देखकर, इन सबके ऊपर कुछ शान्त तथा अधिक सुलभ रखते हैं: उन जनों का संग जो भगवान् से प्रेम करते हैं। इसमें एक गहरा तथा व्यावहारिक विवेक है। हम शायद भगवान् के दर्शन को आदेश न दे सकें, या अपने प्रयत्न से मुक्ति के द्वारों पर धावा न बोल सकें; किन्तु हम, हममें से अधिकांश, पवित्रजनों का संग खोज सकते हैं — वह मित्र जो भगवान् से प्रेम करता है, वह सभा जहाँ उनका नाम गाया जाता है, किसी सन्त के वचन एक पुस्तक में। और वह संग, प्रचेता हमें बताते हैं, एक निम्नतर भला नहीं बल्कि सर्वोच्च है, क्योंकि उसमें भगवान् उपस्थित, स्मरण, तथा प्रेम किए जाते हैं। अध्याय अपने समापन में हमें एक कोमल पाठ भी छोड़ता है। महाबली प्रचेता, भगवान् को अभी देखकर भी, बड़े वृक्षों पर क्रोध में भड़क उठते हैं — एक स्मरण कि महान् आत्माओं को भी अपने क्रोध पर शासन करना चाहिए — और यह भगवान् ब्रह्मा का शान्त परामर्श ही है जो उन्हें मोड़ता है, ताकि उनके क्रोध का ही विषय एक उपहार बन जाए। कृपा, अध्याय दिखाता है, हमारे क्रोध के प्रति धैर्यवान् तथा उससे परे उदार है, हमें वहाँ आशीर्वाद देने को तैयार जहाँ हमने केवल एक युद्ध की आशा की थी।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, पवित्र संग खोजें तथा उसे संजोएँ, जैसे प्रचेताओं ने उसे स्वर्ग से भी ऊपर संजोया। भक्तों के संग का कोई-न-कोई रूप खोजें — भगवान् से प्रेम करने वाला कोई मित्र, उनका नाम जपने वाली कोई सभा, या बस किसी सन्त अथवा शास्त्र के वचन ध्यानपूर्वक पढ़ें गए — और उसे अपने दिन के कुछ मिनट दें, उसे एक छोटी वस्तु के रूप में नहीं बल्कि उपहारों में सर्वोच्च के रूप में ग्रहण करते हुए। ऐसा करते हुए, इन शब्दों के साथ धन्यवाद अर्पित करें — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”, यह स्मरण करते हुए कि ऐसे संग में भगवान् सचमुच उपस्थित हैं। और अध्याय का कोमल पाठ भी लें: अगली बार जब किसी बाधा पर आप में क्रोध उठे, तो भगवान् ब्रह्मा के परामर्श पर प्रचेताओं की भाँति रुकें, और सुज्ञान को अपनी अग्नि को कोमल करने दें, यह विश्वास करते हुए कि कृपा आपको क्रुद्ध करने वाली वस्तु को भी एक उपहार में बदल सकती है। पवित्र संग को महत्त्व देने तथा करुणा को अपने क्रोध को संयमित करने देने में, आप आशीर्वादित प्रचेताओं के पदचिह्नों पर चलते हैं।

उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का त्रिंश अध्याय प्रचेताओं की लम्बी भक्ति का प्रतिफल कहता है। समुद्र में दस हज़ार वर्ष की तपस्या के पश्चात्, शिव द्वारा सिखाए स्तोत्र से भगवान् को सन्तुष्ट करके, परम पुरुष उनके समक्ष अपने मनोहर रूप में प्रकट होते हैं और उन्हें एक वरदान देते हैं: कि वे कुछ काल तक संसार के अपने उत्तरदायित्व अपनी भक्ति गँवाए बिना निभाएँ, और अन्ततः उन्हीं को पा लें। उस कृपा से प्रेरित होकर, वे उद्धोषित करते हैं कि कोई स्वर्गिक फल या स्वयं मुक्ति भी भगवान् से प्रेम करने वालों के साथ बिताए एक क्षण की बराबरी नहीं कर सकता। समुद्र से लौटकर, वे पृथ्वी को वृक्षों से आच्छादित पाते हैं और, क्रोध में, वनों को अग्नि से भस्म करने को उद्यत होते हैं — किन्तु भगवान् ब्रह्मा उन्हें सुज्ञान भरे परामर्श से शान्त करते हैं, और वृक्ष, उनके परामर्श पर, शान्ति के प्रतीक स्वरूप अपनी पालित-पुत्री कन्या मारिषा को अर्पित करते हैं, जिसे चन्द्रदेव सोम ने बाल्यकाल में पोषित किया था। उनका क्रोध शान्त होकर, वे उससे विवाह करते तथा अपनी नगरी में बस जाते हैं, समय आने पर दक्ष के पिता बनते हैं, जो सृष्टि के महान् प्रजापतियों में से एक हैं। इस प्रकार अध्याय सच्ची भक्ति के प्रतिफल, पवित्र संग के सर्वोच्च मूल्य, और उस करुणा को सिखाता है जो क्रोध को उपहार में बदलती तथा संघर्ष से भी शान्ति लाती है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, त्रिंश अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-30-the-lords-boon-to-the-pracetas-and-their-marriage-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट